प्राचीन भारत में राज्य एवं राजा के पद के निर्माण पर प्रकाश डालें

प्राचीन भारत में राज्य और राजा की संस्था का विकास क्रमिक रूप से हुआ। प्रारंभिक वैदिक काल में समाज जन या जनपद के रूप में संगठित था, जहाँ सत्ता सामूहिक थी और राजा का पद अभी स्थायी रूप से स्थापित नहीं हुआ था। धीरे-धीरे जनों के विस्तार और स्थायी कृषि जीवन के विकास के साथ राजनीतिक संगठन अधिक सुदृढ़ हुआ, जिससे राज्य और राजतंत्र की स्पष्ट रूपरेखा बनी।

- 1. राज्य की उत्पत्ति

ऋग्वेद में “जन”, “विश्व”, “ग्राम” आदि शब्दों का उल्लेख मिलता है, जो जनजातीय समाज की ओर संकेत करते हैं।

जब जनजातियाँ स्थायी रूप से बसने लगीं और भूमि पर अधिकार की भावना विकसित हुई, तब राज्य की संकल्पना उभरने लगी।

यह राज्य प्रारंभ में जनसत्ता आधारित था, पर धीरे-धीरे राजसत्ता आधारित होने लगा।

- 2. राजा के पद का विकास

प्रारंभ में राजा केवल जन का प्रमुख (जनपति) या सैनिक नेता होता था, जो युद्ध में नेतृत्व करता और शांति काल में न्याय करता था।

जैसे-जैसे जनजातीय संगठन बढ़ा, राजा का पद वंशानुगत (hereditary) होता गया।

राजा को ‘राजन्’, ‘सम्राट’, ‘स्वराज’, ‘एकराट’ जैसे उपाधियों से सम्मानित किया जाने लगा।

उसका कार्य केवल शासन न रहकर धर्मपालन, न्याय, रक्षा और आर्थिक स्थिरता से भी जुड़ गया।

- 3. राजसत्ता की सीमाएँ और सहयोगी संस्थाएँ

राजा सर्वशक्तिमान नहीं था।

उसे दो प्रमुख संस्थाओं — सभा और समिति — के सहयोग से शासन करना पड़ता था।

ये संस्थाएँ नीति, न्याय और युद्ध के विषयों पर परामर्श देती थीं।

ब्राह्मण वर्ग राजा का प्रमुख मार्गदर्शक माना जाता था, जिससे राज्य में धर्म आधारित शासन की परंपरा विकसित हुई।

- 4. राज्य का स्वरूप

राज्य का उद्देश्य प्रजा की रक्षा (रक्षण) और पालन (पालन) था, इसलिए राजा को “रक्षक” और “पालक” कहा गया।

राजसूय, अश्वमेध जैसे यज्ञों के माध्यम से राजा अपनी सार्वभौमिक सत्ता को वैधता प्रदान करता था।

धीरे-धीरे राज्य का स्वरूप केंद्रीकृत और राजन्य वर्ग के अधीन होता गया।

- निष्कर्ष

प्राचीन भारत में राज्य की उत्पत्ति जनजातीय संगठन से विकसित राजसत्ता के रूप में हुई।
राजा का पद धर्म और जनहित पर आधारित दायित्वपूर्ण संस्था था।
बाद के काल में यही राजतंत्र अधिक केंद्रीकृत, शक्तिशाली और वंशानुगत रूप में विकसित होकर महाजनपदों और साम्राज्यों की नींव बना।